अतिसंग्रह से अशांति

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

आवश्यकता से अधिक संग्रह करना अतिसंग्रह है। मानव की मूलभूत आवश्यकता है रोटी, कपड़ा, शिक्षा और चिकित्सा। इसकी पूर्ति सभी को करनी चाहिए। जीवन को आराम से चलाने के लिए वस्तुओं की आवश्यकता होती है। मानव की इच्छापूर्ति न होने से वह अशांत हो जाता है। अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थितियों में सम रहने से मानव शांति प्राप्त करता है। लोभी व्यक्ति अतिसंग्रह करता है। अतिसंग्रह करने से दूसरे व्यक्ति का हक छीना जाता है। दूसरों के अंश को छीनना, दूसरों को वंचित करना आदि कार्य अतिसंग्रह के कारण होते हैं। अतिसंग्रह करने से वस्तुओं की कमी होती है। इससे समाज में तनाव और अशांति पैदा होती है। अधिक धन की सुरक्षा करना भी यह कठिन कार्य है। अतिसंग्रह करने से ऊंची–ऊची कई अटालिकाएं बनाकर उसकी सुरक्षा करना कठिन कार्य है। आज कहीं–कहीं ऊंची–ऊंची अटलिकाएं है तो दूसरी तरफ घासफूस की टूटी–फूटी झोंपड़ी दिखाई देती है। जब गरीब का खून चूसा जाता है तभी कोई व्यक्ति अतिसंग्रह कर सकता है। व्यक्ति को संतोष धारण करना चाहिए। संतोषरूपी धन प्राप्त हो जाने पर अन्य सभी धन धूली के समान प्रतीत होने लगते हैं। अतिसंग्रह करने वाला व्यक्ति बंधन में फंसता है। लालच के घेरे से ऐसा व्यक्ति निकल ही नहीं पाता। उसके परिवार में भी संतुलन बिगड़ जाता है। धन के ऊपर सभी की निगाहें लगी रहती हैं। धन के बटवारें को लेकर भाईयों–भाईयों में कलह छिड़ जाती है। कलुषित मनोवृत्ति लोभ के कारण होती है। लोभ के कारण आसक्ति उत्पन्न होती है। मोह का वटवृक्ष बहुत बड़ा है। अच्छाईयां गुणों का परिवार है और बुराईयां मोह का परिवार है। धन कुछ है सबकुछ नहीं। धन एक साधन है साध्य नहीं। नियम कानून का पालन करते हुए संग्रह करना चाहिए। परिग्रह एक भावना है। परिग्रह का अर्थ है। चारों तरफ से ग्रहण करना। अपरिग्रह इसका विपरीत है। अपरिग्रह में आवश्यकता से अधिक नहीं ग्रहण किया जाता। अतिसंग्रह करना

अशांति का कारण होता है। सही तरीके से अर्जित किया गया धन परिवार, समाज और राष्ट्र की सुरक्षा कर सकता है।

अर्जन और विसर्जन संतुलन का सूत्र है। अर्जन का अर्थ है कुछ कमाना और विसर्जन का अर्थ है जो कमाया गया है उसका कुछ अंश दान में देना। मानव जीवन से लेकर प्रकृति पर्यन्त यह नियम लागू रहता है। सृष्टि में भी यह संतुलन दिखायी देता है। सम्पूर्ण सृष्टि संतुलन के आधार पर चल रही है। अगर संतुलन गड़बड़ा जाये तो जीवन में या सृष्टि में असंतुलन आजाता है। सृष्टि के असंतुलन का अर्थ है भूकम्प आजाना, सुनामी आजाना और प्रकृति का प्रकोप हो जाना। इसके अनके कारण है। मानव प्रकृति का अंधाधुंध दोहन कर रहा है। वृक्ष कटते हुए चले जा रहे हैं। उनके स्थान पर नये वृक्षों का रोपण नहीं हो रहा है, जिससे प्रकृति में असंतुलन दिखलाई दे रहा है। अगर यही प्रक्रिया जारी रही तो मानव जीवन दूभर हो जायेगा। सृष्टि की परम्परा बहुत ही जटिल है। सृष्टि में जड़ और चेतन दो तत्वों के सहयोग से संतुलन बना हुआ है। जड़ और चेतन में जब मानव के द्वारा विकृति उत्पन्न की जाती है तो वे तत्व अपने स्वाभाविक रूप से विकृत हो जाते हैं। भारतीय जनमानस की सभी परम्पराएं यह स्वीकार करती हैं कि यह सृष्टि अनेक तत्वों से बनी हुई है, उसमें अर्जन और विसर्जन दोनों तत्व समान रूप से कार्य कर रहे हैं।

सृष्टि का जो स्वरूप हमारे सामने है वह स्थल और जल दो रूपों में प्रत्यक्ष रूप से दिखाई दे रहा है। आजकल प्रकृति का अंधाधुध दोहन पर्यावरण में असंतुलन पैदा कर दिया है। जिसका परिणाम है अतिवृष्टि और अनावृष्टि, उष्मा और ताप का बढ़ना और घटना, वैश्विक परिदृश्य में ताप का बढ़ना और घातक बीमारियों का होना। यदि समय रहते मानव सावधान न हुआ तो इसका परिणाम उसे अवश्य भुगतना होगा। इसके लिए मानव प्रकृति से जितना अधिक ग्रहण करे उससे अधिक देने का प्रयास करे तो संतुलन बना रह सकता है। जीवन की सुरक्षा के लिये केवल इतना समझना आवश्यक नहीं है कि प्रकृति हमारे लिये उपयोगी है, समझना यह है कि हम प्रकृति के एक अवयव हैं। जिस प्रकार हममें जीवन है उसी प्रकार प्रकृति के प्रत्येक कण–कण में जीवन है। प्रकृति ने मानव को उपभोग के लिये एक अक्षय खजाना दिया है। यदि इसका सदुपयोग किया जाय तो यह समाप्त होने वाला नहीं है, किन्तु यदि इन तत्त्वों का

दुरुपयोग किया जाएगा तो समाप्त भी हो जायेगा और मानव के अस्तित्त्व के लिये संकट भी उपस्थित हो जायेगा। प्रकृति के इस कोश से मानव जितना ग्रहण करे अर्थात् अर्जन करे, उतना देने का अर्थात् विसर्जन का भी प्रयास करे तो लेन–देन में सन्तुलन बना रहेगा और दोनों के अस्तित्व की भी रक्षा होती रहेगी। उपभोक्तावादी संस्कृति के बढ़ते प्रभाव के कारण मनुष्य अपने पुराने आदर्शों और परम्पराओं को भूलकर अर्जन अधिक और विसर्जन कम कर रहा है। आवश्यकता से अधिक अर्जन दूसरों के हिस्से पर अधिकार करना है। यदि साधन सम्पन्न व्यक्ति अधिक अर्जन करता रहेगा तो समाज में गरीबी बढ़ेगी, लूट, खसोट, भ्रष्टाचार, दुराचार बढ़ेगा। इससे समाज में अराजकता फैलेगी। इसलिए ज्ञान, दान, पद प्रतिष्ठा का अर्जन और विसर्जन दोनों होना चाहिए। आवश्यकता से अधिक अर्जन पाप है। यह मनोवृत्ति सभी मनुष्यों में होनी चाहिए।